# सुर्ख़ियों से ग़ायब होते ही ग़ज़ा पर ख़ामोश हुई दुनिया : इकतीसवाँ न्यूज़लेटर (2026)

निशाना, लैला शवा (फ़िलिस्तीन), 2013

प्यारे दोस्तो,

**ट्राईकॉन्टिनेंटल : सामाजिक शोध संस्थान** की ओर से अभिवादन।

कुछ त्रासदियाँ इसलिए ग़ायब हो जाती हैं कि वे ख़त्म हो चुकी हैं। वहीं कुछ इसलिए ग़ायब हो जाती हैं क्योंकि वे एक लंबे समय तक चलती रहती हैं, इतने लंबे कि दुनिया उनकी आदी हो जाती है। वे अब न टेलिविज़न के कार्यक्रमों और इंस्टाग्राम की रीलों में रुकावट पैदा करती हैं और न ही अख़बार के पहले पन्ने के लायक़ रही हैं। वित्तीय बाज़ार अपने सामान्य हिसाब-क़िताब पर लौट जाते हैं और राजनयिकों को भी कह दिया जाता है कि इन दर्दनाक पर थका देने वाले मुद्दे की अपनी विवरण पुस्तिकाएँ बंद कर दें। लेकिन इस सबके बावजूद त्रासदी तो वैसी की वैसी बनी रहती है : संयुक्त राज्य अमेरिका (यूएस)-इज़राइल द्वारा ग़ज़ा में फ़िलिस्तीनियों का जनसंहार किसी नई शांति की स्थापना से ग़ायब नहीं हुआ है, बल्कि इसलिए अनदेखा किया जा रहा है कि एक निरंतर चलने वाली प्रक्रिया हो जाने के कारण अब यह ऐसी

ख़बर नहीं रहा जिसे बेचा जा सके।

एक वक़्त था जब ग़ज़ा में हुआ हर धमाका मेरे फ़ोन पर सुनाई देता था – मलबे से बच्चों को निकाले जाने की ख़ौफ़नाक तस्वीरें, अस्पतालों पर बमबारी के बीच मरीज़ों की मदद करते स्वास्थ्यकर्मियों की तस्वीरें और इज़राइली बमों से फ़िलिस्तीनियों की पूरी नस्लें तबाह होने पर रोते-बिलखते परिवारों की तस्वीरें। आज फ़िलिस्तीनी परिवार एक से दूसरे शरणार्थी शिविर में भटक रहे हैं और बच्चे मलबे के ढेर से अपने खो चुके बचपन को खोज निकालने की कोशिश कर रहे हैं, इस सबके बीच इज़राइल के हमले जारी हैं। लेकिन दुनिया का ध्यान अब इस ओर नहीं, ये अब एक रोज़मर्रा की घटना बन चुकी है। हम अपनी सुविधानुसार सुन्न हो चुके हैं।

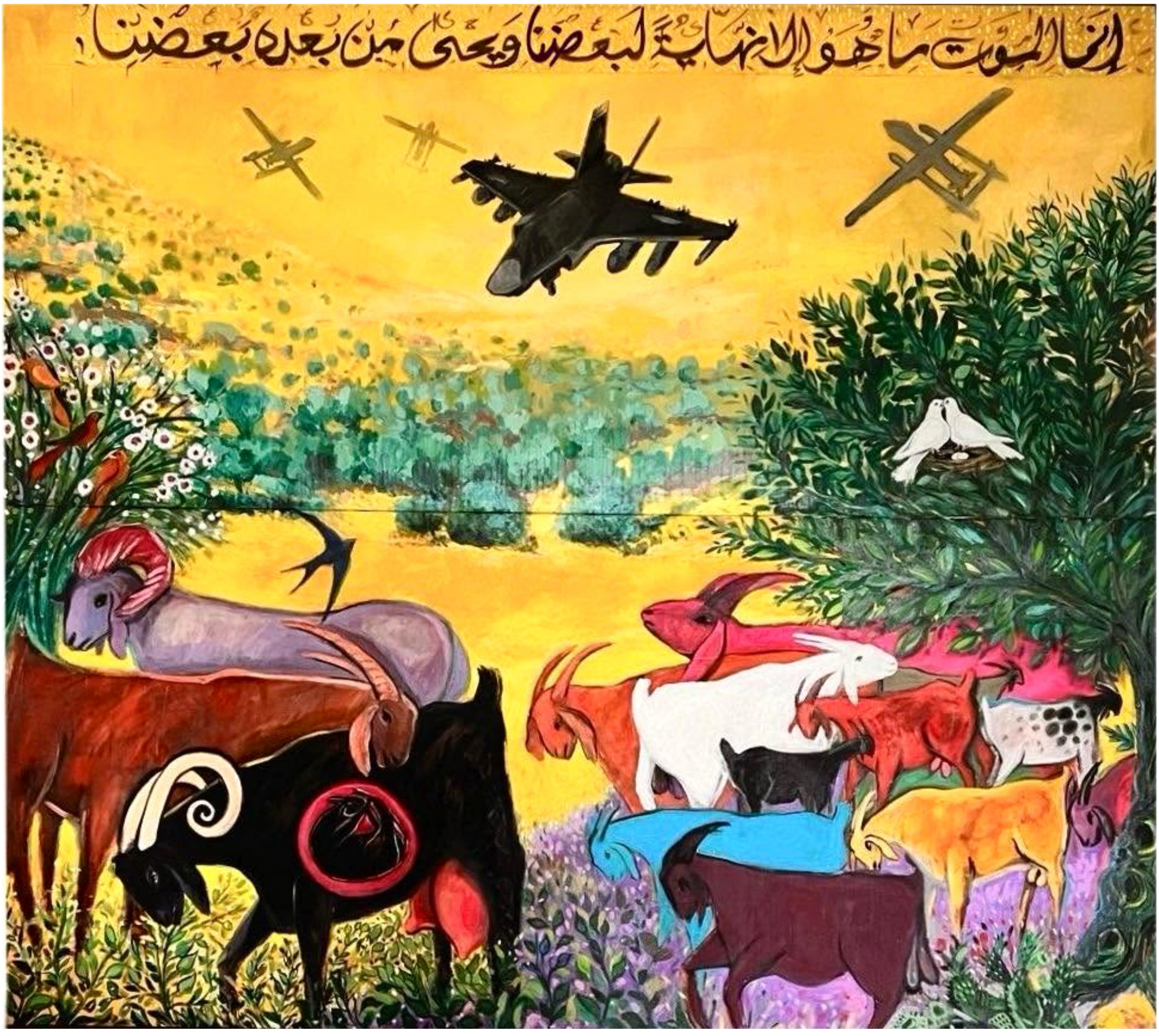


मृत्यु सिर्फ़ कुछ लोगों के लिए अंत है; उनके जाने के बाद भी जीवन आगे बढ़ता रहता है, मोहम्मद अल-हवाजरी (फ़िलिस्तीन), 2022

इस विनाश और मृत्यु का पैमाना हमारी समझ से परे है। फ़िलिस्तीनी स्वास्थ्य मंत्रालय की **रिपोर्ट** है कि अक्टूबर 2023 के बाद से इज़राइली हिंसा ने कम-से-कम 73,221 फ़िलिस्तीनियों को मार डाला है (जिनमें आधे महिलाएँ और **बच्चे** हैं) और 173,654 अन्य घायल हुए हैं। फरवरी 2026 तक ग़ज़ा में **कम-से-कम** 21,289 बच्चे मारे जा चुके हैं और 44,500 घायल

हुए हैं। 11 अक्टूबर 2025 को तथाकथित युद्धविराम लागू होने के बाद भी इज़राइली हिंसा में 1,100 फ़िलिस्तीनी मारे गए हैं – जिनमें कम-से-कम 260 बच्चे शामिल हैं – और 3,546 अन्य घायल हुए हैं। इसका मतलब है कि इज़राइलियों ने तब से हर दिन औसतन चार फ़िलिस्तीनियों को मारा है।

इतिहास में ऐसे क्षण आते हैं जब शब्द अपने मायने खो बैठते हैं। इसलिए नहीं कि शब्दकोश फिर से लिखे जा रहे हों; न ही इसलिए कि भाषा खुद को बदल लेती हो – बल्कि इसलिए कि राजनीतिक सत्ता उन शब्दों में से वे तमाम वास्तविकताएँ निकाल फेंकती है जिनका वर्णन वे कभी किया करते थे। इज़राइली और यूएस अधिकारी द्वारा 'युद्धविराम' शब्द के इस्तेमाल ने काफ़ी हद तक इसे ऐसे ही एक उजड़ा हुआ शब्द बना दिया है। जिसे कभी हिंसा के निलंबन, बंदूकों के थम जाने और शांति के लिए राजनीतिक जगह तैयार किए जाने के रूप में समझा जाता था, वह अब पूरी तरह कुछ और बन गया है : शांति के नाम पर बमबारी, विस्थापन, घेराबंदी और सैन्य नियंत्रण की निरंतरता के लिए एक प्रबंधकीय शब्द।

आँकड़े भीषण विनाश का अंदाज़ा लगाने का प्रयास तो करते हैं, लेकिन संख्याएँ अभाव को बयान नहीं कर सकतीं। हर संख्या के पीछे एक अधूरे इतिहास वाला परिवार है और एक ऐसा बच्चा है, जो हमेशा उस घर को याद रखेगा जो अब मौजूद नहीं है ; या, कई मामलों में पूरे के पूरे ख़त्म हो चुके ख़ानदान। ये आँकड़े अपने आप में काफ़ी भयावह हैं, जैसा कि संयुक्त राष्ट्र राहत और कार्य एजेंसी (**यूएनआरडबल्यूए**) की रिपोर्टों में दिखाई देता है – जिसके लिए **योगदान** दिया जाना अब भी बाकी है। संयुक्त राष्ट्र की हर रिपोर्ट अब आपातकालीन बुलेटिन कम और स्थायी आपदा के अभिलेख ज़्यादा लगती है।

तरबूज़, हाज़िम हर्ब (फ़िलिस्तीन), 2024

जब इज़राइल अंतर्राष्ट्रीय कानून का पूरी तरह उल्लंघन करता है और इसकी उसे कोई राजनीतिक क़ीमत नहीं चुकानी पड़ती तो फिर आक्रोश का क्या फ़ायदा ? ग़ज़ा के खंडहरों से परे, इज़राइली क़ब्ज़े वाले वेस्ट बैंक और पूर्वी यरुशलम में फ़िलिस्तीन का नया नक़्शा लगातार गढ़ा जा रहा है। कोई भी दिन ऐसा नहीं बीतता जब भूमि क़ब्ज़ाने, बसावटों के विस्तार, फ़िलिस्तीनी घरों के विध्वंस, सेट्लर (फ़िलिस्तीनी ज़मीन पर जबरन घुस आने वाले इज़राइली) के हिंसक हमलों, और फ़िलिस्तीनी क्षेत्र के लगातार विखंडन की रिपोर्ट न आती हो। यरुशलम की एक सार्वजनिक और जनहित क़ानूनी संस्था – *?? ?????* (नगरों का शहर) की **रिपोर्ट** है कि इज़राइली योजना प्राधिकरणों ने अधिकृत पूर्वी यरुशलम के फ़िलिस्तीनी इलाक़े उम्म लीसन के 800 घरों को ध्वस्त करने और अवैध सेट्लरों के लिए 450 घर बनाने का फ़ैसला किया है – यह निष्कासन और विलय (annexation) की व्यापक **नीति** का एक हिस्सा है। जैसे ग़ज़ा पर भारी सैन्य हमलों से

तबाही मचाई जा रही है, उसी तरह पूर्वी यरूशलम और वेस्ट बैंक का स्वरूप भी बदला जा रहा है। यह काम प्रशासनिक तरीक़ों से किए जा रहे विलय, कानूनी बहानों, स्थायी बस्तियाँ बसाने, फ़िलीस्तीनियों को प्रशासनिक हिरासत में रखने तथा उनके घर ढहाने जैसी दमनकारी कार्रवाइयों के ज़रिए किया जा रहा है। अधिकृत फ़िलिस्तीनी क्षेत्र पर ये हमले एक ही परियोजना के अलग-अलग रूप हैं: फ़िलिस्तीनी लोगों का जनसंहार और तथाकथित 'बृहत् इज़राइल' (Greater Israel) के निर्माण के नाम पर उनकी ज़मीन पर क़ब्ज़ा।

एक तरफ़ इर अमीम जैसे समूह बसावटों के विस्तार और भूमि-हनन का विस्तृत दस्तावेज़ीकरण कर रहे हैं, दूसरी ओर इज़राइली समाज में नैतिक पतन नई तेज़ी से फैल रहा है। 2014 में, 'हारेत्ज़' (Haaretz) की स्तंभकार कैरोलिना लैंड्समैन ने साफ़-साफ़ साथ **लिखा** था कि फ़िलिस्तीनियों पर इज़राइली सैन्य शासन कोई गुप्त तंत्र नहीं है, जो केवल सेना द्वारा संचालित हैं; बल्कि यह 'इज़राइल में अन्य किसी भी प्रयास की तुलना में व्यापक भागीदारी वाली सबसे बड़ी, सबसे दृश्यमान परियोजना' है। दूसरे शब्दों में, यह क़ब्ज़ा न केवल अपनी सैन्य उपस्थिति से कायम है, बल्कि इज़राइली समाज की संस्थाओं, संसाधनों, आदतों और रोज़मर्रा की भागीदारी से भी।

एक दशक से भी अधिक समय बाद, लैंड्समैन इज़राइली समाज के आंतरिक परिवर्तन के प्रश्न पर लौटीं और 10 जुलाई 2026 के अपने एक लेख में **तर्क** दिया कि 'इज़राइली' पहचान की भाषा का स्थान तेज़ी से 'ज़ायोनी' पहचान – और इसलिए ज़ायोनी-सैन्य पहचान – द्वारा लिया जा रहा है। हालाँकि इज़राइली पहचान अपनी स्थापना से ही ज़ायोनीवाद से जुड़ी रही है। यह बदलाव इसलिए महत्त्वपूर्ण है क्योंकि यह संकेत करता है कि पूरी तरह क़ब्ज़े, सैन्यीकरण और यहूदी वर्चस्व से अलग एक नागरिक पहचान की सीमित संभावना भी अब और दूर हो गई है।

इस सामाजिक व्यवस्था के मनोवैज्ञानिक परिणाम इज़राइली समाज के भीतर भी दिखाई देते हैं। जैसा कि इज़राइली व्यसन और मानसिक स्वास्थ्य केंद्र की एक हालिया **रिपोर्ट** ने बताया कि चार में से एक इज़राइली ने इस ज़ायोनी-सैन्य समाज और फ़िलिस्तीनियों के ख़िलाफ़ उसके जनसंहार द्वारा उत्पन्न मनोसामाजिक तनाव का सामना करने के लिए कड़ी दवाओं (hard drugs) का सहारा लिया है। ऐसे आँकड़ों का इस्तेमाल कभी भी क़ब्ज़ा करने वाली ताक़त और कब्ज़े में रहने वाले लोगों के बीच झूठी समानता स्थापित करने के लिए नहीं किया जाना चाहिए। न ही इन्हें इस तरह पेश किया जाना चाहिए कि फ़िलिस्तीनियों के बेमिसाल विनाश से ध्यान भटक जाए। लेकिन ये आँकड़े एक अहम बात ज़रूर उजागर करते हैं: जो समाज स्थायी सैन्यीकरण के आधार पर संगठित होता है, वह स्वयं भी अपनी ओर से छेड़ी गई हिंसा के प्रभाव से अछूता नहीं रह सकता। भय, मानसिक आघात, नशे की लत, नैतिक आघात और सामाजिक अलगाव इज़राइल के रोज़मर्रा के जीवन के ताने-बाने में बहुत गहराई से शामिल हो गए हैं।

संगमरमर का युद्ध #05, हानी ज़ूरोब (फ़िलिस्तीन), 2007

इस बीच, ग़ज़ा में रहने वाले मेरे फ़िलिस्तीनी मित्र मुझसे कहते हैं कि वे पहले भी बमबारी झेल चुके हैं और उन्हें पूरा भरोसा है कि वे अपने घर फिर से बना लेंगे। लेकिन, उनके अनुसार, जिस चीज़ को फिर से खड़ा करना कहीं अधिक कठिन है, वह है फ़िलिस्तीनी जनता का अपने सामूहिक राजनीतिक जीवन पर विश्वास और यह उम्मीद कि वह उन्हें एक बेहतर भविष्य की ओर ले जाएगा। बाधित शिक्षा, बीमारियों का इलाज न होना, बार-बार विस्थापन, भूख और परिवारिक रिश्तों का नुक़सान ऐसे घाव छोड़ जाते हैं, जो कंक्रीट की दीवारों से कहीं आगे तक फैले होते हैं। इसी तरह ग़ज़ा के बच्चों पर थोपी गई मनोवैज्ञानिक हिंसा भी ऐसे निशान छोड़ती है – जिनमें से लगभग सभी के लिए, **यूनिसेफ के अनुमानों** के अनुसार, आने वाले दशकों तक मानसिक स्वास्थ्य और मनोसामाजिक सहायता की आवश्यकता होगी।

इमारतें दोबारा खड़ी की जा सकती हैं, लेकिन ग़ज़ा के लोगों को सिर्फ़ इमारतें नहीं बल्कि इतिहास दोबारा बनाना होगा :

उन्हें समय चाहिए फिर से सीखने, घाव भरने, संगठित करने और एक भविष्य के बारे में सोचने के लिए। इस भविष्य को दोबारा हासिल करने के लिए उन्हें राजनीतिक आत्मविश्वास को भी फिर से हासिल करना होगा और उस राजनीतिक उपकरणों को भी जिनके ज़रिए सामूहिक आशा को सामूहिक शक्ति में तब्दील किया जा सके।

ग़ज़ा में हो रहे भयानक हमलों के साथ-साथ पूर्वी यरुशलम और वेस्ट बैंक में जारी विस्थापन अभियान **याददाश्त** को संस्थागत रूप से बर्बाद कर रहा है। इज़राइली हिंसा ख़ासतौर से अभिलेखागारों, श्मशानों, पारिवारिक तस्वीरों, गैलरियों, पुस्तकालयों, म्यूनिसिपल रिकार्डों, अजायबघारों, स्थानीय ऐतिहासिक स्थलों और थिएटरों को निशाना बनाती है। इन संस्थानों पर हमलों से कोशिश की जाती है कि उन भौतिक नींवों को मिटा दिया जाए जिनके ज़रिए लोग ख़ुद को याद रखते हैं। इस मिटाने की प्रक्रिया में लोगों को सच बन पाने से ऐतिहासिक तौर से रोक दिया जाता है। लोगों को मारा गया है, उन्हें घायल किया गया है लेकिन साथ ही साथ फ़िलिस्तीनी चेतना पर भी हिंसक हमले किए गए हैं।

आदमी और पेड़, मोहम्मद जोहा (फ़िलिस्तीन), 2003

शायद यही एक वजह है कि ग़ज़ा पर अंतर्राष्ट्रीय बातचीत में पहले से अधिक ख़ामोशी आ गई है। ऐसा इसलिए नहीं कि हिंसा किसी भी तरह कम हुई हो ; बल्कि इसलिए, क्योंकि इसके निहितार्थ इतने भयावह हैं कि दुनिया उनका ईमानदारी से सामना नहीं कर सकती। इस हिंसा का सामना करने का मतलब होगा, उस नैतिक व्यवस्था के पूर्ण पतन का हिसाब लेना, जो अब भी मानवाधिकारों की बात करने का दावा करती है। इसका मतलब होगा, हथियारों की बिक्री और हस्तांतरण, राजनयिक संरक्षण, मीडिया सेंसरशिप, सैन्य गठबंधनों और तमाम इंसानी ज़िंदगी को असमान माने जाने के बारे में असहज सवाल पूछना। इस असहजता के कारण कुछ नाम कब्रें जमने से पहले ही गायब हो जाते हैं; जबकि कुछ अन्य

सार्वजनिक स्मृति में हमेशा के लिए लिख दिए जाते हैं – और इससे भी पहले विनाश को ही भुला दिया जाता है। क्योंकि ऐसी बातें खाने की मेज़ पर रोज़मर्रा की बातचीत के बीच बेस्वाद सन्नाटा पैदा करती हैं।

लेखक और कलाकार प्रशिक्षित बचाव दलों की तरह मलबा नहीं हटा सकते, न ही अस्पतालों और स्कूलों के पुनर्निर्माण का नेतृत्व कर सकते हैं। लेकिन हम मौन से इनकार कर सकते हैं और इस बात पर ज़ोर दे सकते हैं कि इतिहास को न केवल संधियों और सैन्य अभियानों से मापा जाता है ; बल्कि उन लोरियों से भी, जो बीच में रुक गईं; उन कविताओं से, जो अधूरी रह गईं; और उन आवाज़ों से, जो खंडहरों के बीच भी गाती रहती हैं। ट्राईकॉन्टिनेंटल : सामाजिक शोध संस्थान ने एक दशक पहले अपनी स्थापना के समय से ही यह स्पष्ट कर दिया है कि फ़िलिस्तीनी लोगों पर थोपी गई व्यवस्थित हिंसा और उस हिंसा को भुला देना हमें मंज़ूर नहीं – और हम कभी भी भूलने को सामान्य नहीं होने देंगे।

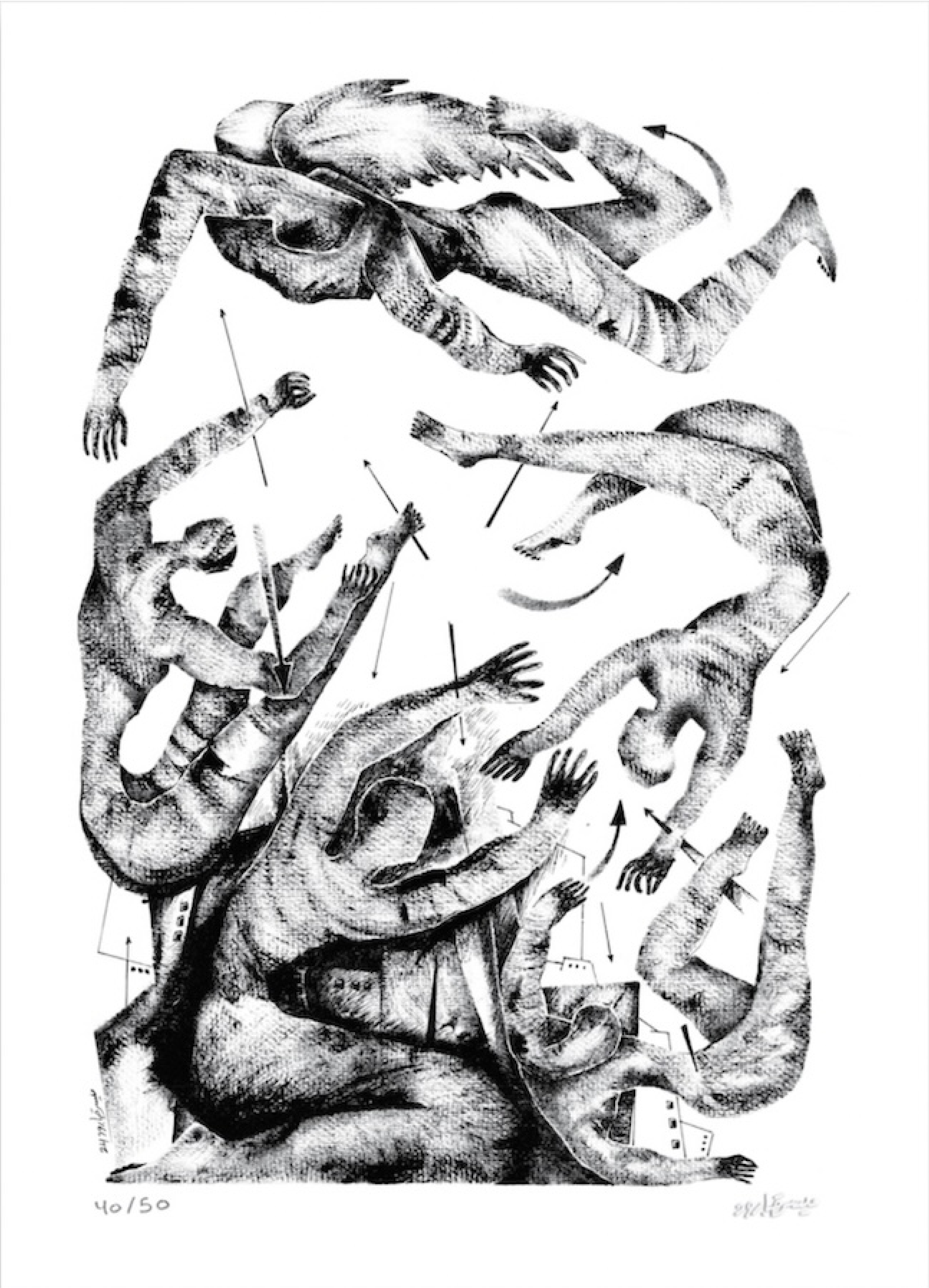
40/50

मैं अब भी ज़िंदा हूँ, मैसारा बारूद (फ़िलिस्तीन), 2024

हमारे मित्र रोजर वॉटर्स और प्रसिद्ध फ़िलिस्तीनी गायिका-गीतकार मोना मियारी का नया संगीत वीडियो हमें यही याद दिलाता है कि हम भूलने से इनकार करते हैं। उनका गीत *“??????????? ???? ??-?????????“* यह दावा नहीं करता कि संगीत इतनी बड़ी त्रासदी को ख़त्म कर सकता है। उसका उद्देश्य इससे कहीं सरल है—ग़ज़ा की पीड़ा को दुनिया के लिए एक आम और भुला दी जाने वाली बात न बनने देना। ऐसी दुनिया में, जहाँ लोगों को ग़ज़ा से नज़रें फेरने की आदत डाली जा रही है, यह गीत हमसे कहता है कि हम देखते रहें, याद रखते रहें और इस याद को एक बेहतर दुनिया के संघर्ष की बुनियाद बनाएँ। हर साम्राज्यवादी गठबंधन केवल आज्ञापालन नहीं चाहता ; बल्कि विस्मृति भी चाहता है। “कम्फर्टबली नम्ब री-इमेजिन्ड” – जिसकी आय फ़िलिस्तीन चिल्ड्रन्स रिलीफ फंड (**Palestine Children’s Relief Fund**) को जाती है – मानव एकजुटता की नाजुक, फिर भी अपरिहार्य निरंतरता को प्रस्तुत करता है ; और पीड़ितों की कहानियों को हमारी नैतिक कल्पना से गायब होने देने से इनकार करता है।

गीत के केंद्र में ‘हिंद की लोरी’ (Hind’s Lullaby) है – यह खंड मोना मियारी द्वारा छह वर्षीय फ़िलिस्तीनी बच्ची हिंद राजब (Hind Rajab) की याद में लिखा गया, जो ग़ज़ा में बचावकर्ताओं से अपने पास पहुँचने की गुहार लगाते हुए मारी गई थी। यह लोरी उस असहनीय स्मृति को मुक्ति के वादे में बदल देती है:

أسمع صوت ملاكٍ मुझे एक फ़रिश्ते की आवाज़ सुनाई दे रही है
يناديني باسمي मेरा नाम पुकारते हुए
أحرار باقين हम आज़ाद हैं
أحرار.. باقيين हम आज़ाद हैं
لو من الأرض للسما.. طالعين चाहे हमें धरती से निकाल आसमान पर भेज दिया जाए
لابد ان تتحرّر فلسطين फ़िलिस्तीन ज़रूर आज़ाद होगा

स्नेह सहित,

विजय